आचार्य वीरेश्वर शास्त्री द्राविड़

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा
पर्यवेक्षक - वैदिक हेरिटेज एवं पाण्डुलिपि शोध संस्थान
राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर

श्री द्राविड़ महोदय भारत के सुविख्यात विद्वान्, सर्वशास्त्रपारंगत, अपने विषयों के व्याख्याता, सफल अध्यापक, श्रौतस्मार्तकर्मानुष्ठाननिरत, राजवर्ग से सम्मानित, लोकमान्य, महर्षिकल्प एक महात्मा व्यक्ति थे। आपकी पितृ-परम्परा में अनेक पीढ़ियों तक सोमयाजी श्रोत्रिय विद्वान् हुए हैं। आपने भाद्रपद शुक्ला सप्तमी (श्री राधाष्टमी) शनिवार, संवत् 1616 को अर्ध-रात्रि के पश्चात् दीक्षितों के बड़म (ओत्तर) संकेतित द्राविड़ कुल तथा मूलकाड कांचीमण्डल, दक्षिण भारत में जन्म लिया। आपकी माता का नाम लक्ष्मी तथा पिता का नाम सुब्रह्मण्य दीक्षित था। आपका वत्स गोत्र, भार्गव, च्यवन, प्राप्नुवान्, और्व और जमदग्नि-ये पांच प्रवर थे। आप कृष्णयजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखाध्यायी विद्वान् थे।

दक्षिणापथ में कांचीमण्डल में मूलकाड नाम से एक प्रसिद्ध ग्राम है। यहां श्री वरुणाचल दीक्षित, यज्ञेश्वर दीक्षित, कृष्ण दीक्षित, सुब्रह्मण्य दीक्षित आदि अनेक प्रसिद्ध विद्वानों ने जन्म लिया था। श्री यज्ञेश्वर दीक्षित तक 25 पीढियों में सभी अनुवंशज सोमयाजी थे। आपके दो पुत्र श्री कृष्ण दीक्षित तथा श्री सुब्रह्मण्य दीक्षित उपनयन के पश्चात् घनपाठियों के विद्यालय में चार वर्ष तक तैत्तिरीयसंहिता, अन्य ग्रन्थ व आरण्यक ग्रन्थों का अध्ययन कर कांचीनगर में आ गये थे। यहीं से चलपन (समुद्र के समीप विद्यमान नगर) तैलंग, बंग, मिथिला, पाटलिपुत्र, गया तथा अवध होते हुए मण्डली सहित काशी पहुंचे। काशी में गंगा के सोमेश्वर घाट पर विद्यमान मानमन्दिर में विश्राम किया और वहीं रहते हुए वेद, न्याय, साहित्य आदि विषयों का अध्ययन किया। जीविका की दृष्टि आपने यहीं से ऋत्विक कर्म प्रारम्भ किया।

श्री अप्पय दीक्षित के छठे अनुवंशन की हरिशंकर दीक्षित की दौहित्री तथा बज्रटंक कृष्ण की पुत्री लक्ष्मी के साथ आपका पाणिग्रहण हुआ। आपके दो पुत्रियों में से ज्येष्ठ पुत्री का विवाह आठ वर्ष की अवस्था में ही जयपुर राजगुरु मन्वाजी श्री कामनाथजी के साथ सम्पन्न हुआ। दो कन्याओं के जन्म लेने के उपरान्त श्री सुब्रह्मण्य दीक्षित अपने परिव्राजक गुरु के आदेश से आात्मवीरेश्वर महादेव की उपासना में लीन हए। स्कन्दपुराणन्तर्गत काशी खण्ड में प्रोक्त

वीरेश्वर स्तोत्र का पाठ करने से दो वर्ष पश्चात् आपके पुत्र उत्पन्न हुआ और आपने उसका नाम 'वीरेश्वर' रखा। जन्म के पश्चात आपके नेत्र मुंदे हुए थे जो कुलदेव के पूजन का व्रत लेने के पश्चात् खुले थे। बाल्यकाल में आप उदर रोग से पीड़ित रहते थे, जिसे श्री विधु बाबू वैद्य तथा श्री कृष्णशास्त्री तैलंग ने उपचार कर शान्त किया था। आपके नाना का नाम भी सुब्रह्मण्य शास्त्री था, जिनके पुत्र श्री नारायण शास्त्री बहुत विख्यात विद्वान् हुए थे।

श्री द्राविड़ की दूसरी भगिनी सरस्वती का पाणिग्रहण भी जयपुर में ही श्री विश्वनाथ शास्त्री के साथ सम्पन्न हुआ था। आप श्री कामनाथ शास्त्री की बड़ी बहन मंगला देवी और उसके पति श्री साम्ब शास्त्री के मध्यम पुत्र थे अर्थात् श्री कामनाथ शास्त्री के भागिनेय थे। श्री कामनाथ शास्त्री व उनकी पत्नी श्रीमती गंगादेवी ने सन्तान न होने से श्री विश्वनाथ शास्त्री को अपना उत्तराधिकारी (दत्तक पुत्र) बना लिया था। जैसा कि बताया जा चुका है, श्रीमती गंगादेवी भी सुब्रह्मण्य शास्त्री दीक्षित की ज्येष्ठ पुत्री थी और ये जयपुर महाराज की राजमहिषी को मन्त्रोपदेश करने के कारण गुराणीजी के नाम से प्रसिद्ध थीं।

पांच वर्ष की अवस्था में मातुल श्री पापा शास्त्री (श्री नारायण शास्त्री) ने आपका विद्यारम्भ संस्कार किया। अपनी दोनों पुत्रियों के आग्रह पर आपकी माता श्रीमती लक्ष्मी दीक्षित आपको लेकर जयपुर आ गई। आपकी छोटी बहिन सरस्वती देवी अल्पवयस्का थी; अतः माता उनकी देख-रेख के लिये जयपुर में तीन वर्ष तक रहीं। इन वर्षों में श्री शास्त्री ने संस्कृत कालेज, जयपुर के अध्यक्ष श्री रामभजजी सारस्वत के पास अमरकोष, सिद्धान्तकौमुदी आदि ग्रन्थों का अध्ययन प्रारम्भ किया। उपनयन संस्कार के लिये माता आपको पुनः काशी ले गई। वहाँ अष्टम वर्ष में वैशाख शुक्ला द्वादशी सम्वत् 1924 को आपका उपनयन हुआ । आपने वेदाध्ययन प्रारम्भ किया। जब आपकी बड़ी बहन का सीमन्तोत्सव हुआ, तब आप पुनः जयपुर आये, परन्तु अधिक न रह सके और अपने मातुल पुत्र के उपनयन व मातुलपुत्री के विवाह पर पुनः काशी लौट गये । श्री साम्ब शास्त्री ने आपके अध्ययन की व्यवस्था की और आापको श्री नेने बालकृष्ण शास्त्री भट्ट की पाठशाला में प्रविष्ट करा दिया गया था। वहाँ 6 मास में केवल तीन प्रपाठक का अध्ययन ही सम्पन्न हो सका था। इससे असन्तुष्ट होकर श्री पापा शास्त्री ने प्रापको महाविद्वान् श्री रामशास्त्री खरे की पाठशाला में प्रविष्ट करा दिया । वदे के विद्वान् श्री शंकर नारायण शास्त्री द्राविड़ के पास आपने वेदाध्ययन किया । यहाँ से अध्ययन कर गुरुजी के वार्धक्य के कारण आपके माता-पिता के कुछ ही दिनों में अन्तर पर निधन हो जाने से आप के अध्ययन में विघ्न उपस्थित हो गया। फिर भी गुरुजी के प्रेरणा से कुछ अध्ययन चलता रहा।

कौण्डिन्यगोत्रीय बोधायनसूत्रानुयायी, क्रमान्तवेदपाठी, व्याकरण तथा साहित्य के विद्वान् पं. श्री राजेश्वर शास्त्री की कन्या भवानी से आपका विवाह वैशाख कृष्णा 2 सम्वत् 1929 में सम्पन्न हुआ। श्री राजेश्वर शास्त्री

'नागेश शास्त्री'के नाम से प्रसिद्ध थे तथा श्री शंकर शास्त्री एवं मैसूर राज्य के अन्नसत्राध्यक्ष श्री सबुह्मण्य शास्त्री के वंशज थे। आपके विवाह में आपकी भगिनी गंगा देवी ने जयपुर महारानी से 1500 रूपये की आर्थिक सहायता दिलवाई थी। विवाह के उपरान्त आपका अध्ययन पुनः प्रारम्भ हुआ। आप पं. यागेश्वर शास्त्री के पास विभिन्न विषयों का अध्ययन करने के लिये नियमित रूप से जाने लगे।

आपके सहाध्यायियों में मातुलपुत्र के अतिरिक्त गाडगिल, श्री भिक्षु शास्त्री मौनी तथा श्री राम शास्त्री तैलंग के नाम उल्लेखनीय हैं। आपने साढे चार वर्षों में सिद्धान्तकौमुदी पर पूर्णाधिकार कर लिया और फिर मनोरमा, अर्थसंग्रह, हैमवती, परिभाषेन्दुशेखर गोविन्दाचार्य कृत चन्द्रिका व्याख्या सहित लघुशब्देन्दुशेखर, कैयट कृत टीका सहित नवाह्निकभाष्य और साधिकार भाष्य पर पूर्णाधिकार प्राप्त कर लिया। गुरुजी के घर अध्ययन करने के अतिरिक्त आप मामाजी के घर पर भी स्वतन्त्र रूप से अध्ययन किया करते थे। वहाँ आपने सम्पूर्ण अष्टाध्यायी, तर्कसंग्रह, न्यायबोधिनी, माघकाव्य, कुमारसम्भव, मेघदूत, शाकुन्तल, उत्तररामचरित, भारतचम्पू, नृसिंहचम्पू एवं रामायणचम्पू आदि ग्रंथों का अध्ययन किया। साथ ही नैषध, माथुरी पंचलक्षणी एवं जागदीशी, सिंहव्याघ्रलक्षण, कुवलयानन्द, काव्यप्रकाश, साहित्यदर्पण आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थों का भी अध्ययन किया। इसी प्रकार श्री बाल शास्त्री रानाडे से आपने व्युत्पत्तिवाद, शक्तिवाद, सपरिष्कार परिभाषेन्दुशेखर, शब्देन्दुशेखर, विषयतावाद तथा ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य का अध्ययन किया था।

अध्ययनकाल में ही आपकी कनिष्ठ भगिनी सरस्वती का अचानक देहान्त हो गया और आपकी पत्नी भी अपस्मार रोग से आक्रान्त हो गयी । बहुत उपचार करने के पश्चात् भी रोग शान्त न हुआ और दिवंगत हो गई । अनेक सांसारिक कष्टों को सहन करते हुए भी आपने अपना अध्ययनक्रम नहीं छोड़ा और जयपुर चले आये । यहाँ पहुँचने पर आपने अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम आप महाराजा संस्कृत कालेज, जयपुर में साहित्याध्यापक नियुक्त हुए, जहाँ आपने 8 अगस्त, 1866 तक अध्यापन किया और वहीं से सेवानिवृत्त हुए । म0 म0 पं0 श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने जो आपका उल्लेख किया है, उससे ज्ञात होता है कि कालान्तर में शिक्षा विभाग के अधिकारी आपकी सलाह से ही कार्य किया करते थे । तत्कालीन निदेशक श्री मक्खनलालजी आप से बहुत अधिक प्रभावित थे और आपका अत्यन्त सम्मान किया करते थे ।

अवकाश प्राप्त करने पर आप अपने घर पर ही अनेक व्यक्तियों का निःशुल्क अध्यापन किया करते थे। आपके पास स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करने वाले अनेक विद्वानों में पं0 श्री जगदीश शर्मा दाधीच, भूतपूर्व साहित्य प्राध्यापक, संस्कृत कालेज, जयपुर का नाम उल्लेखनीय है, जो आपके द्वारा संस्थापित वीरेश्वर पुस्तकालय में अवैतनिक मंत्री रहे

थे। आपने काशी तथा जयपुर में अपने नाम से एक पुस्तकालय की स्थापना भी की थी, जिसका नाम वीरेश्वर पुस्तकालय था। वर्तमान में इस भवन में राजस्थान संस्कृत अकादमी द्वारा पाण्डुलिपिविषयक शोधकार्य प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया है। आप के रचनात्मक कार्य के सम्बन्ध में (1) श्रीधरी (शब्देन्दुशेखर की टीका), (2) (शब्देन्दुशेखर की टीका), विवरण (कैयटकृत महाभाष्य का प्रथम व द्वितीय अध्याय) और भोज का सरस्वती कंठाभरण इत्यादि ग्रन्थों का सम्पादन किया था–ऐसा उल्लेख मिलता है। इनमें सरस्वती कंठाभरण वैशाख शुक्ला अष्टमी सम्वत् 1943 को जैन प्रभाकर मुद्रणालय, काशी से प्रकाशित है। कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री ने अपने जयपुरवैभवम् में आचार्य श्री वीरेश्वर शास्त्री जी द्रविङ को कतिपय पद्य समर्पित किए हैं, जो उनके व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व को ज्ञापित करते हैं -

शब्दशास्त्रबोद्धारोऽपि हेलयाऽन्यशास्त्रगतं
पाण्डित्यं प्रदर्शयन्तः कैर्न वरिवस्यन्ते
स्थूलकृष्णकायैर्ज्ञातनानाविधोपायैरहो
चाणक्यैरिवैतैः किल के वा न निरस्यन्ते ।
'श्रीजीकी मोरी' मभिमण्डयन्तो हवनभरै-
र्ये रीतिं श्रयन्तो वैदिकानामनु दृश्यन्ते
निशितसमीक्षाशराः कुपितदृशाऽस्त्रिणोऽमी
द्राविडास्ते वीरेश्वरशास्त्रिणोऽद्य शस्यन्ते ॥ [1]

भट्ट मथुरानाथ शास्त्री नेआपका सादर उल्लेख किया है। आप अत्यन्त प्रतिभावान्, वैदुष्यसम्पन्न, शान्त विद्वान् थे। आपका अप्रकाशित रचनात्मक कार्य सम्प्रति उपलब्ध नहीं हो सका है।

सन्दर्भ

1. जयपुरवैभवम् / पृ. 161